# षष्ठ : अध्याय :

## 'पानी के प्राचीर' में प्रतिबिंबित समस्याएँ -

**प्रस्तावना -**

रचनाकार चाहें वह कवि हो या गद्यकार , सामाजिक जीव होता है। वह भी उसी वातावरण और जीवन का अंग होता है, जिसके हम हैं। अत: तमाम सामाजिकों की तरह वह आज भी समाज की विभिन्न क्रिया - प्रतिक्रियाओं, गतिविधियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।

रचनाकार अपने समाज की हलचलों, गतिविधियों, आचार-विचारों, आपसी अनुकूलताओं-प्रतिकूलताओं एवं उसकी अच्छी-बुरी तमाम प्रकार की अनुभूतियों का द्रष्टा एवं भोक्ता होता है। इन्हीं में उसके रचनात्मक संवेदन के प्रेरक तत्व होते हैं, जिन्हें लेकर वह अपने सामाजिक जीवन की वस्तुनिष्ठ प्रस्तुति करता है। उस प्रस्तुति को ही 'उद्देश्य' जीवन-दर्शन वा 'जीवन-दृष्टि ' भी कहते हैं, जिसके द्वारा रचनाकार समाज की विभिन्न समस्याओं को प्रतिबिंबित करता है। एक आँचलिक कथाकार के साहित्य का उद्देश्य या जीवन दर्शन अन्य साधारण कथाकारों से भिन्न होता है। उसका एक विशिष्ट दृष्टिकोण रहता है। बन्सीधर के शब्दों में **'' आँचलिक उपन्यासों में स्वातंत्र्योत्तर कालीन भारत के उन टूटते, दरकते भारतीय गाँवों की दर्दनाक दास्तान है, जो उसकी रीढ कहलाते हैं। स्वतंत्रता के बाद उन गाँवों पर अभिशाप की एक ऐसी काली छाया मंडरा रही है, जिसके भीतर उनका दम घुट रहा है। पता नहीं वे कब दम तोड दें। स्वतंत्रता से पूर्व उसके सुखों के हमारें गाँवों ने जो सपने देखे थे, जो आशाएँ-अपेक्षाएँ और उमंगें उन्होंने मन में पाली थीं, वे सब मलवे का ढेर होकर रह गयी हैं। अंधविश्वास, अज्ञान एवं शोषण का जितना भी क्रूर और भयावह रूप हो सकता है उसीका अत्यंतिक रूप इन उपन्यासों की कथावस्तु का माहौल होता है। सत्तारूढ दल एवं अन्य राजनीतिक एवं सामाजिक संस्थाओं एवं कार्यकर्ताओं का जो घिनौना रूप सामने आया, उसने आँचलिक कथाकार को विशेष रूप से व्यथित-मथित किया है। आँचलिक उपन्यासों में यही सारा परिवेश अपने समवेत रूप में अभिव्यक्त हुआ है।''** 1 एक आँचलिक कथाकार को अपने अंचल को उसकी समग्रता के साथ प्रस्तुत करना अभिप्रेत होता है।

**''आँचलिक उपन्यास की कथा बनते-बिगडते, टूटते-जूडते आँचलिक जीवन और उसके नये-पुराने मूल्यों की टकराहटों की व्यथा-कथा भी है और उससे ऊपर उठकर व्यापक राष्ट्रीय संदर्भ में उस टूटन, कसमसाहट, घुटन, और जागरण की अंगडाइयों का प्रामाणिक दस्तावेज भी है, जो स्वतंत्रता के बाद इस देश के सामान्य जन के जीवन की व्यथा कथा बनती चली गई। इन उपन्यासों के माध्यमसे उपन्यासकारों ने बडी कुशलता से भारत के अविकसित ग्रामांचलों में रहनेवाले सामान्य जन की जिंदगी, उनकी आर्थिक-सामाजिक विसंगतियों, सांस्कृतिक विशिष्टताओं तथा नैतिक मूल्यों और उनकी अद्‌भुत जिजीविषा बडा ही सशक्त और जीवंत चित्र उपस्थित किया है।'' 2**

कुछ आँचलिक उपन्यास ऐसे होते हैं जिनमें निश्चित सफलता तो प्राप्त नहीं होती, परंतु सुंदर भविष्य की ओर संकेत करते हैं। ऐसे उपन्यासों में प्रमुख हैं - 'मैला आँचल', 'सती मैया का चौरा', ' बलचनमाँ ',' वरूण के बेटे', 'जंगल के फूल','रतिनाथ की चाची ',' अलग अलग वैतरणी','सागर लहरें और मनुष्य ', 'नदी फिर बह चली ','पानी के प्राचीर','जल टूटता हुआ' आदि। इन उपन्यासों में अधिकतर लेखकों का स्वर आशावादी एवं गाँवों के प्रति पुनर्निर्माण का स्वर है। 'पानी के प्राचीर' में प्राचीरों के टूटने की ओर स्पष्ट संकेत हैं।

**''रामदरश मिश्र के आँचलिक उपन्यास 'पानी के प्राचीर' में जीवन और कला रूप के अन्वेषण की नयी आत्म-चेतना के दर्शन होते हैं। उपन्यास में पूर्वी उत्तरप्रदेश के एक अभावग्रस्त गाँव की संघर्षशील चेतना को अपेक्षाकृत अधिक ठोस सामाजिक, राजनीतिक स्थितियों के आधारपर मूर्त अनुभव बिंब के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यही कारण है कि 'पानी के प्राचीर' में प्राचीरों से घिरे होने के बावजूद अंधेरे बंद कमरे की घुटन और कुंठा नहीं हैं बल्कि उसमें जिंदगी के वैविध्य और गतिशीलता का चित्रण हुआ है।''3**

'''पानी के प्राचीर' में गोरखपुर जिलें में राप्ती और गौरा नदियों की धाराओं से घिरे हुए एक विशाल भू-भाग की समस्याएँ चित्रित हैं। युगों से यह प्रदेश अपनी केवल विवशता, अभाव और संघर्ष के रूप में शेष रह गया है।'' 4

''संसार के सारे सूत्रों से कटा हुआ यह प्रदेश अपने आप में एक संसार है। यहाँ न सडके हैं ,न शिक्षा संस्थाएँ, न सुविधापूर्ण डाकखाने हैं, न सुरक्षा के लिए पुलिस चौकियाँ, न चिकित्सालय हैं, न खेतों के सुधार या विकास के लिए कोई सरकारी या गैर सरकारी व्यवस्था है। यहाँ है असूझ, गरीबी, व्यापक अशिक्षा., अजगरों की तरह बल खाते दौडते, ऊँचे नीचे नाले, बिमारी, बेकारी, आपसी फूट और सदियों पुरानी जर्जर नैतिक मान्यताएँ। इस विरान प्रदेश में नेता आते हैं केवल वोट लेने, सरकारी कर्मचारी आते हैं लोगों को लडाकर अपना उल्लू सीधा करने।'' **5**

**<u>अ) भौगोलिक समस्या -</u>**

नदियों के प्राचीर से घिरा यह भू-भाग वास्तव में बंदी है। घोर कछार में बसा हुआ है, चारों ओर फैली हुई नदियाँ बरसात में बीसों मील तक उमड कर ठांठें मारती हैं। बाढ और बाढ ही दिखाई पडती है। दस-बारह मील तक सवारी का कोई रास्ता नहीं है, बाहर से न कोई आता है न जाता है।

गोरखपुर शहर यहाँ से बीस मील की दूरी पर है। यह गरीब क्षेत्र शहर में लडकों को भेजकर अंग्रेजी शिक्षा दिलाने की सामर्थ्य नहीं रखता। इस प्रदेश को दरोगा तक गालियाँ देता है -

'' ये भी साला कोई इलाका है ? साला चारों तरफ दरयाव है, खाई है, खंदक है, चोर हैं, उच्चके हैं, न सडके हैं, न ठीक रास्ते और यहाँ के आदमी साले इतने दरिंदे हैं कि रोज खून करते हैं। इन हैवानों के दरम्यान मेरी जान आफत में पड गई हैं। '' **6**

**''एक ओर पानी के प्राचीर चारों ओर से अंचल को घेरे हुए हैं दूसरी ओर गाँव के विकास को इसने रोका है, अंदर ही अंदर गाँववासी एक पीडा, घुटन व अभावों का निरंतर आभास कर रहे हैं।'' 7**

15 अगस्त 1947 के दिन जब भारत को स्वतंत्रता मिली और सारे ग्रामवासी बडे उल्लास के साथ आपसी राग द्वेष भूलकर एकत्रित हुए थे उन्हें लक्ष्य करके नीरू ने भी गाँव की दूरवस्था को निम्नलिखित शब्दों में सही सही चित्रांकित किया है।

'' गाँव के चारों ओर पानी की ये दीवारें जो आप देख रहे हैं उन्हें गुलामी ने और बलवान किया है। उन प्राचीरों ने हमें एक छोटेसे दायरे में घेर रखा हैं। बाहर से न कोई रौशनी आ पाती है, न कोई शक्ति । इन दीवारों ने हमें घेरकर दुनिया की सारी सुविधाओंसे वंचित कर दिया है।'' **8**

उपर्युक्त परिस्थितियों के बावजूद इसप्रकार के भूभाग प्राकृतिक प्रकोपों के भी शिकार बन जाते हैं। कभी अकाल तो कभी बाढ इन लोगों के अभावग्रस्त जीवन को और भी विकृत बना देते हैं।

इस अंचल में बाढ आती है चली जाती है परंतु छोड जाती है अनेकों अनुत्तरित प्रश्न। चिंतित ग्रामीण जन दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इधर-उधर विचरण करने लगते हैं। बाढ के उपरांत खाद्यान्न के अभाव की, व्यवसाय की, स्वास्थ्य के निम्न स्तर की समस्या के साथ साथ महामारी फैलने की समस्या का सामना ग्रामीण जनता को करना पडता है । कछार अंचल में फैली महामारी का चित्रण करते हुए मिश्रजी लिखते हैं -

'' चमरौटी से रोने की आवाज आ रही है, शायद कोई मर गया। गडेरियों के घरों की ओर से भी हाहाकार आ रहा है शायद कोई वहाँ भी मर गया ..... एक चीख उधर भी फूट रही है शायद कोई मर गया है। कौन-कौन मर गये ? कौन जाने ? लगातार बदली छायी हुई है, वातावरण में एक मितली सी भर गयी है। उपवास सर्दी गिल्टी। चारों ओर मरघट का सन्नाटा छाया हुआ है। रह-रह कर रोगियों के कराहने की आवाज रात के सुनसान को गहन बना रही हैं ।'' **9**

इसप्रकार के अंचलों में सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक समस्याएँ संभवत: सदैव मुँहबायें खडी रहती हैं। आगे चलकर इन विभिन्न समस्याओं को गिनाने का प्रयास किया है।

अंचल पिछडेपन का प्रतीक है जहाँ निम्नवर्ग और शोषित जातियों का निवास है। इस वर्ग की समस्याएँ बहुत ही व्यापक एवं जटिल हैं। भारत के जनपदीय ग्रामीण विलक्षण जातियों के पिछडेपन की प्राय: सभी समस्याओं की अनुभूतिजन्य वास्तविक अभिव्यक्ति ने आँचलिक उपन्यासों को मानववादी संवदेना तथा रागात्मक चित्रण से भर दिया है। पिछडी एवं अनुसूचित जातियों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण चित्रण समाज की उन परंपरागत कुरीतियों में यातना सहता हुआ ग्रामीण समाज, समस्याग्रस्त जीवन व्यतीत करने के लिए

विवश है। दयनीय स्थिति से संघर्ष करता हुआ समाज पीढी दर पीढी इन भयंकर समस्याओं से जूझ रहा है। अंचल -समाज हर प्रकार से पिछडा तथा अव्यवस्थित है जिसके कारण उत्पन्न कई समस्याएँ हैं -

## ब) सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याएँ -

### अंधश्रध्दा -

कछार अंचल में बसे लोगों में इतनी अंधश्रध्दा होती है कि, उसके कारण अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। होली के त्यौहार पर रामदीन को होली में डालने की घटना के माध्यम से वहाँ के लोगों में किसप्रकार अंधश्रध्दा होती है इसका उदाहरण दिया है। होली में जो चीज पडती है उसे वापस नहीं लिया जाता ऐसी उनकी धारणा है। जब रामदीन को महेश आदि युवक होली में डालते हैं तब उनकी अंधश्रध्दा का खंडन करते हुए होली के और उसमें समर्पित की जानेवाली वस्तु के संबंध में नीरू कहता है -'' भाइयों, होली में हमें पुरानी और सडी -गली चीजें डालनी चाहिए। होली में हम लोग अपने पुराने गम को , वैरभाव को जलाते हैं और नया जीवन शुरू करते हैं। यह उपला लोगों का जीवन है, इसे होली में डालना गुनाह है।'' **10**

इसतरह लेखक ने लोगों की अंधश्रध्दा का उल्लेख करते हुए त्यौहारों के वास्तविक अर्थ को नीरू के कथन के माध्यम से समझाने का प्रयास किया है।

कछार अंचल में बसे ये लोग देवी-देवताओं,जादू-टोना,भूत-प्रेत,जंतर-मंतर,पूजा-पाठ आदि के प्रति विश्वास रखते हैं।

ग्रामीण जीवन की परंपरा से चली आयी हुई ये अंधश्रध्दा की समस्याएँ इस जीवन को बडा विकृत बनाती हैं। गेंदा के माध्यम से मिश्रजी ने इस समस्या के प्रति संकेत किया है। गेंदा के माध्यम से चुडैल के प्रभाव का अच्छा उदाहरण लेखक ने प्रस्तुत किया है।

''हाँ गेंदा को चुडैल अब भी पकडती है। इतनी पूजा करने के बाद भी देवी-देवता उसके सहाय्यक नहीं होते। चुडैल ने उसे पकडा सो पकड ही रखा। सोखा-ओझा के शब्दों में कभी बंसवारी की चुडैल होती है,कभी पोखरी की,कभी बडकी बारी की। यह चुडैल घंटों तक बेचारी के मुँह से झाग उगलवाती है,बेहोश रखती है।'' **11**

विवाह के विलंब के लिए भी देवीदेवताओं के कोप का ही कारण माना जाता है। ऐसी स्थिति में युवा लडकियाँ मनोवैज्ञानिक बिमारियों से ग्रस्त रहती हैं। परिणामस्वरूप वे एक मानसिक कुंठा से ग्रस्त हो जाती हैं। देवी-देवताओं की प्रार्थना,आसपास के तीर्थक्षेत्रों की यात्रा आदि के द्वारा इस स्थिति को व्यक्त किया गया है। ये सोखा-ओझा के शिकंजे में भी फँसी रहती हैं। इन नारियों के समान ये अनपढ,अज्ञानी अँचलवासी भी अंधश्रध्दाओं के भी शिकार बनते हैं। चैत की नवरात्रि की आखिरी रात में पांडे पुरवा गाँव के दक्खिन स्थित काली माई के मंदिर में देवी के दर्शन के लिए बडी मात्रा में ग्रामवासी इकठ्ठा होते हैं तथा अपना टोना-टटका,भूत-प्रेत उतरवाने की चेष्टा करते हैं। मंदिर में बीस-बाईस औरतें नाचती हैं और इतना बेभान होकर नाचती हैं कि ,अपने वस्त्रों तक का भी उन्हें भान नहीं रहता। लेखक ने इसका बडा मार्मिक चित्र खींचा हैं-

''देवी की डेवढी भक्तों से भर गयी है। बीस-बाईस औरतें खेल रही हैं। सिर पर का कपडा खिसक गया हैं,भूत- से बाल बिखर गये हैं। चोली के बटन खुल गये हैं। साडी अस्त-व्यस्त हो रही है। वहाँ एकत्र लोग प्रसाद लूट रह हैं।'' **12**

इन अंधश्रध्दालू लोगों की मान्यता यह है कि,स्त्री-पुरूषों के शरीर में देवता का संचार रहता है। चैत में नवरात्रि की आखिरी रात सुमेश पांडे भी सोखा थे इनके शरीर में देवता आते हैं। लोगों का विश्वास यह था वे बरमबाबा के सच्चे सेवक हैं,उनका हाथ बडा यशी है जिसे उन्होंने छू दिया वही अच्छा हो गया।

उपन्यास के ग्रामांचलवासी विधवा का मुँह देखना अशुभ मानते हैं। जब विधवा गेंदा रास्ते में मिल जाती है तब लोग झल्लाकर लौट आते हैं। सोचते हैं कि यह जल्दी हटे तो अपने रास्ते से जाएँ। ऐसी स्थितियों में विधवाओं को ज़ीना मुश्किल हो जाता है। गेंदा ऐसी अंधश्रध्दाओंका शिकार है। उसका भाई भी उसके प्रति यही भाव रखता है और रास्ता काटने पर कसाई की तरह पीटता है ओर गालियाँ बकते हुये कहता है -

''सिर चढा रखा है इस रॉड को। चुप से कहीं बैठती ही नहीं। जहाँ कहीं शुभ साइत पर निकलो कि रास्ता छेंककर खडी है गेंदा महारानी। आज मै कितने बडे काम से जा रहा था,लेकिन इस राँड ने असगुन कर दिया।'' **13**

गेंदा को दौरे पडते हैं। यह एक नवयौवना विधवा हैं। पढे-लिखे लोग जानते हैं इसीलिए हिस्टीरिया का नाम देते हैं। गाँववाले इसे अज्ञानवश चुडैल का प्रभाव मानते हैं। ''पता नहीं हिस्टीरिया क्या बला है। पढे-लिखे लोग अजीब-अजीब नाम बोलते हैं और अपने देवी-देवताओं में अविश्वास कर अंग्रेजों के देवी-देवताओं का नाम लिया करते है।'' **14**

विधवा गेंदा दिन-ब-दिन सूखती जा रही है। रामदरश के शब्दों में -''उसकी देह का मांस सूख रहा है,नसें उभर आयी हैं,आँखें धँसी जा रही हैं,आँखों के नीचे काली-काली परतें बिछ गयी हैं।'' **15**

वास्तव में यह उसके भाई बैजू की लापरवाही और गेंदा के कुपोषण के कारण सूख रही है मगर इस संदर्भ में अंधश्रध्दालू ग्रामवासियों की दृष्टि बडी विकृत है वे यह मानते हैं कि -''विधवा के लिए सूखकर काँटा हो जाना ही ठीक है। उसकी चटक-मटक सजावट और उसका मोटा होना कुलच्छन है। पति नहीं हैं तो विधवा जीकर ही क्या करेंगी ? उसे मर ही जाना चाहिए घुट-घुटकर। पता नहीं जिंदा रहने पर कब उसके पांव ऊँचे-नीचे पड जायें।'' **16**

लोग मानते हैं गेंदा पति की याद में जल-जलकर सती हो रही है,वाह री गेंदा ! इसी संकुचित वृत्ति ने स्त्री जाति का वैधव्य जीवन नारकीय बनाया है।

अँचलवासियों के मन में कुछ पक्षियों की आवाज अप्रिय लगती है तथा उनकी दृष्टि में यह असगुन है। सगुन असगुन का विश्वास इन ग्रामवासियों के मानस में सदियों से घर कर रहा है। प्रस्तुत उपन्यास में बंदरों का चीं-चीं स्वर असगुन का प्रतीक माना जाता है।

''गाँव की ओर से कुत्ता रो रहा है कुऊँ उ ऊँ-ऊँ-उँ-उँ-ऊँ-ऊँ-कोई पक्षी दूर के पेड पर बैठा कब से रिरिया रहा है मुर्रओ-मुर्रओ आज न जाने क्या होगा ?'' **17**

ग्रामवासियों के मन में बसनेवाली आशंकाओं का भाव स्पष्ट हो गया है। इन ग्रामवासियों के मन में बंदरों का चिल्लाना,रात में कुत्ते का रोना,उल्लू का बोलना,छिपकली की आवाज आदि में बडी सगुन-असगुन की भावना सदियों से घर कर बैठी है।

## क) नारी समस्या :-

समाज की मूल धुरी नारी है। नारी की स्थिति का आकलन सामाजिक परिप्रेक्ष्य में जिसतरह से रूपायित किया गया है वह बहुत मुखर होकर उभरा है। नारी स्थिति के विश्लेषण के अभाव में समाज का सही चित्र प्रस्तुत करना असंभव है। इसीलिए इसी प्रमुख समस्या पर विस्तार से विचार करना अधिक समीचीन है। आँचलिक उपन्यासों में उठाई गई सामाजिक समस्याओं में सर्वाधिक चिंतनीय समाज की धुरी 'नारी' है। आज भी वह प्राचीन रूढि और परंपराओं की श्रृखंलाओं में जकडी हुई है। उसके स्वतंत्र अस्तित्व की पहचान कहीं नहीं है। नारी के लिए उसका जीवन एक शाप बन बैठा है।

ग्रांमाचलों में रहनेवाले स्त्री-पुरूषों में आज भी सामाजिक न्याय के प्रति असमानता दिखाई देती है। आज भी नारियों को समाज के विभिन्न रीति-रिवाजों तथा अत्याचारों का सामना करना पडता है। 'पानी के प्राचीर' में बिंदिया बैजू की रखैल है। बिंदिया खुबसूरत और जाति से चमारिन है। गाँव का हर एक आदमी अपने काम पर बिंदिया को खींचने की कोशिश करता है। हर आदमी उससे छेडखानी करने का अपना सहज अधिकार समझता है। इसलिए बैजू द्वारा बिंदिया को रखैल बनाकर रखने में गाँव के जवानों और वृध्दों के सीने में आग लग गयी। नारी के प्रति यह कुत्सित भाव दर्शनीय है। इसीलिए तो दरोगा तक यह बात पहुँची नारी को ये लोग अपनी वासनापूर्ति का साधन समझते हैं और इसके संबंध में जाति-पाँति तक का भी खयाल नहीं करते। वैसे तो बैजू के इस कर्म पर आपत्ति उठाते हैं पर सबके मन में बिंदिया के प्रति लालसा का भाव है।

## नारी के विभिन्न रूप और उसके प्रति समाज का दृष्टिकोण :-

रामदरश मिश्रजी के आँचलिक उपन्यासों में नारी मुख्यत: माँ, बेटी,बहन और पत्नी आदि विभिन्न रूपों में दिखाई देती है। परिवार में जब बेटी पैदा होती है तो घरवालों को खुशी नहीं होती। 'पानी के प्राचीर' में छेदी की पत्नी को दूसरी बार बेटी पैदा होती है। तब छेदी की माँ अपने आप को दोष देती है। कहती है,कि ''मेरे भाग्य फूट गये,करम जल गया ऐसी राच्छसिन घर में आई है। दुबइया की नानी इतनी कुलच्छिनी होकर आयी है कि घर ही उजाड देगी- लडकी फिर लडकी। अरे,बार-बार लडकी ही पैदा करनी थी तो कोख को जला क्यों नहीं लिया?'' **18**

**नारी की विवाह समस्या :-**

विवाह भारतीय समाज व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। आज भी अज्ञानी ,अनपढ नारियों के जीवन में अनेक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

**दहेज प्रथा तथा अनमेल विवाह :-**

डॉ. महेंद्र भटनागर के शब्दों में - हिंदू समाज में वैवाहिक समस्या को अधिक जटिल बनाया है ,दहेज प्रथा ने। 'पानी के प्राचीर'के पांडेपुरवा ग्राम के मुखिया अपने सुपुत्र महेश के विवाह में दहेज प्राप्त करने के लिए लालायित रहते हैं क्योंकि दहेज से आर्थिक लाभ होता है सो तो गौण बात है,प्रमुख बात है प्रतिष्ठा। मेरे बेटे को इतना दहेज गाँव भर में सबसे अधिक मिला।

अनेक सुंदर और योग्य लडकियाँ समुचित दहेज के अभाव में असुंदर,अयोग्य लडकों से ब्याह दी जाती हैं। परिणामस्वरूप समाज में अनेक कुप्रथाएँ व समस्याएँ जन्म लेती हैं। कभी-कभी नारी विपरीत,घृणास्पद परिस्थितियों का शिकार बन जाती है अथवा अनमेल विवाह के कारण विधवाओं की भीड जमा होती है।'पानी केप्राचीर 'उपन्यास में दहेज में देने के लिए पैसे नहीं है। इस कारण बैजू अपनी बहन गेंदा की शादी एक बूढे शुकुल के साथ कर देता है। ''गेंदा की ठाठें मारती हुई जवानी बूढे के हाथ क्यों सौप दी गयी? बैजू जाने --- - एक ही महीने के बाद गेंदा के विधवा होने का समाचार आ गिरा। '' **19**

विधवा को पुनर्विवाह की अनुमति नहीं। आधुनिक परिवर्तनों के बावजूद भी परंपरा की श्रृखलाओं में बंधा हुआ यह समाज इस विवाह को सहमति नहीं देता। नवयौवना विधवा के प्रति समाज का दृष्टिकोण बडा ही कुत्सित और विकृत रहता है।

'पानी के प्राचीर' में गेंदा अपनी भरी जवानी के प्रांरभ में ही विधवा हो जाती है। उसके सिरके बाल मुंडे हुए हैं। ससुरालवालों ने जब मार-मार कर घर से निकाल दिया तब वह अपने गाँव वापस आती है

वहाँ आने के बाद भी उसे दुख भरे अनुभव सहने पडते हैं। गेंदा ने अपनी विधवावस्था को तीव्रता से अनुभव किया। वह मन ही मन चित्कार ने लगी-

''अब मैं क्या करूँ? क्या करूँ? क्या करूँ अपनी इस भरी-भरी जवानी का ? इसे कहाँ उतार फेंकू ? मैं अपना चेहरा कहाँ काटकर रख दूँ ? मैं अपना अस्तित्व कैसे भुला दूँ ? '' **20**

गेंदा ने अपने आप को बडा असहाय्य अनुभव किया। मैके में भाई द्वारा भी उपेक्षित रहने के बाद उसके मानसिक स्वास्थ के साथ -साथ उसका शारीरिक स्वास्थ भी बिगड गया। निराधार विधवा की सारी दुर्गतियाँ उसे झेलनी पडीं। नारी की विधवावस्था का यह एक अविभाज्य अंग है। क्षीण जर्जर गेंदा का मिश्रजी ने बडा ही मार्मिक चिंत्र खींचा है-

''उसकी देह का माँस सूख रहा है। नसें उभर आयी हैं,आँखें धँसी जा रही हैं। आँखों के नीचे काली काली परतें बिछ गयी हैं।'' **21**

परंतु इस स्थिति से उभरने का कोई उपाय नजर नहीं आता। उसकी इस दुर्गति में सुधार लाने के लिए उसके अपने घरवालों को भी कोई चिंता नहीं। इसीसे उसका भाई बैजू भी इसे भरपेट खाना नहीं देता . समाज के पास भी इस समस्या के निराकरण के लिए कोई अवकाश नहीं,कोई सुख-दुख नहीं है। क्यों कि,विधवा के स्वस्थ रहने न रहने से कोई अंतर नहीं आता। मिश्रजी ने इस तथ्य को बडे मार्मिक शब्दों में अंकित किया है -

''विधवाओं के लिए सूख कर काँटा हो जाना ही ठीक है। उसकी चटक-मटक सजावट और उसका मोटा होना कुलच्छन है। पति नहीं है तो विधवा जीकर ही क्या करेगी?उसे मर ही जाना चाहिए घुट-घुट कर। पता नहीं जिंदा रहने पर कब उसके पाँव उँच्चे-नींचे पड जायें।'' **22**

उल्टे उसकी इस दुरवस्था को विधवा का धर्म मानने की निर्लज्जता का पर्दा फाश करते हुए मिश्रजी ने कहा है -

''गेंदा पति की याद में जल-जल कर सती हो रही है । वाह री गेंदा।'' **23**

दहेज प्रथा,अनमेल विवाह एवं अन्य दूसरे कारणों से अनेकों भारतीय ग्रामीण महिलाएँ विधवाएँ हो जाती हैं । भारतीय ग्रामीण समाज में विधवा विवाह का प्रचलन नहीं के बराबर पाया जाता है। 'पानी के प्राचीर' की गेंदा इसका स्पष्ट उदाहरण है। उसे जवानी की लहरों को मसलते हुए मन मसोसकर अपनी सारी आयु अग्नि में जलानी पडती है । 'पानी के प्राचीर'की तरह अन्य उपन्यासों में बदमी,रतिनाथ की चाची,चमेली,परमेसर की पत्नी,उगनी,गोपी की भाभी,माया आदि अनकों विधवा महिलाओं के जीवन की पीडादायक व्यथा-कथा का चित्रण मिलता है।

**<u>नारी के प्रति विकृत दृष्टिकोण:-</u>**

भारतीय ग्रामीण पारिवारिक व्यवस्था के लग-भग सभी वर्गो में पत्नी की पारिवारिक स्थिति पति से सदैव निम्न समझी जाती है और उसे सदैव अपनी आकांक्षाओं,आशाओं एवं इच्छाओं को पति के समक्ष समर्पित कर चलना होता है। उत्तरप्रदेश के कछार अंचल के मुखिया के बेटे महेश की पत्नी अपने पति के दुर्व्यवहार के कारण घुल-घुल कर क्षीण हो जाती है। उसी प्रकार बनवारी भी अपने बडे भाई धनपाल के सिखाने एवं शिकायत करने से उसके सम्मान की रक्षा के लिए अपनी पत्नी की पिटाई करता है। इस अंचल में नारी की गतिविधियों पर कडे नियंत्रण पाये जाते हैं। मुखिया कहते हैं मेरे विचार से लडकियों को पढाना,उन्हें इतनी आजादी देना अधर्म है। ग्रामीण जनता नगरों में नारी की स्वतंत्रता को देखकर उसे अधर्म का विस्तार समझती है। ''हमारे वेदशास्त्र में लिखा है,कि नारी तो पुरूष के पैरों की जूती है,इसका काम घर में रहकर रसोई बनाना है ,न कि बेहयाई से मरदों के साथ घूमना-फिरना और बात-बात में चढा ऊपरी करना। अहा हा देखिए जिसमें सीता ,सावित्री जैसी पतिव्रता देवियाँ थीं,उसी देश में आज नारियाँ पर- पुरूषों के साथ बात करती हैं,हँसती हैं,घूमती हैं।

सचमुच आजकल अधर्म जोर पर है। मरदों के पैर की जूती,औरतें आज मरदों के सिरों पर नाच रही हैं ..... औरतें तो मारने पीटने से ठीक रहती हैं।उन्हें जो मरद दबाकर ठीक नहीं कर सका वह मरद नहीं नपुंसक है।'' **24**

रग्घु बाबा के रूप में औरत का सही रूप बताने का प्रयास लेखक ने अवश्य किया है।रग्घु के शब्दों में -''औरत घर की लच्छिमी है ।औरत क इज्जत कइले से घर में लच्छिमी आवेली '' **24**

पर इस तथ्य को ये ग्रामवासी स्वीकार करने को तैयार ही नहीं।

**ड) जाति-व्यवस्था संबधी समस्याएँ-**

जाति भेद भारतीय समाज जीवन का एक अविभाज्य अंग बन गया है। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था और उनमें दलित,पीडित,पिछडी जातियाँ सदैव अमानवीय कृत्यों का शिकार बन गयी हैं। आज भी ग्रामांचलों में छुआ-छूत,ऊँच-नीच का भेद भाव करनेवाली कुप्रथाएँ सदैव विद्यमान रही हैं। इसीकारण आज भी ये लोग पीछे रह गये हैं।

जाति व्यवस्था की विकृत प्रवृत्ति के कारण ही बैजू द्वारा बिंदिया चमाइन-को आश्रय देने पर सभी ओर से हाहाकार मचाया जाता है-

''इसने जो चमाइन रख ली है उसका कया होगा ? चमाइन-बाप रे बाप,चमाइन घर में रखकर उसका छुआ खाता होगा -पीता होगा,ब्राम्हण के लिए चमाइन का छुआ खाना -पीना कितना बडा पाप है।'' **25**

''कहाँ यह साला बाभन जाति में जन्मा और कहाँ यह हरजाई चमाइन के दलदल में पडकर पतित हो रहा है।'' **26**

जाति -पाँति की धारणा इन आँचलों में जमकर बैठी है स्वयं गांव का मुखिया कहता हैं -''गांधीजी ने तो आँधी मचा रखी है सारा धरम-करम मिटाने पर तुले हुए हैं। चमार,बाभन कहीं एक हो सकते है?'' **27**

फिर भी बिंदिया चमाइन के पीछे तो स्वयं मुखिया के लडके महेश से लेकर रग्घुबाबा के नाती धीरेंद्र और पपीहा पांडे के छेदीबाबू तक पडे हैं।

आँचलिक उपन्यास साहित्य में जाति-व्यवस्था के यौन संबंधों की स्थापना संबंधी प्रतिबंध एवं उसके खंडन के अनेकों स्थल पर मिलते हैं। 'पानी के प्राचीर 'में गोरखपुर अंचल का बैजनाथ यौन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विजातीय नवयुवती विधवा बिंदिया चमारी को रखैल के रूप में अपने पास

रख लेता है। इससे बैजनाथ गाँववालों के क्षोभ का शिकार बन जाता है।परंतु बैजनाथ से भोज मिलने पर सब प्रसन्न हो जाते हैं। तथा मुखिया चमारी बिंदिया के घर को उजाडने का सक्रीय प्रयास करते हैं। परंतु एक दूसरे से छिपकर अथवा संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था से छिपकर सभी ग्रामीण नवयुवक बिंदिया से यौन संबंधी आवश्यकता पूर्ण करने के लिए लालायित रहते हैं। बिंदिया अपनी झोंपडी को उजाडते देखकर आवेग में इन सारे तथ्यों का पर्दाफाश करती हैं।

**ई) आर्थिक समस्या -**

ग्रामीण अंचल आर्थिक रूप से सबसे अधिक पिछडा व साधनहीन माना जाता है। ब्रिटिश सरकार की अन्यायपूर्ण नीति के कारण ग्रामों की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गयी थी। अर्थिक क्षेत्र को हस्तगत करने के बाद धीरे -धीरे समस्त भारत के उत्पादन पर ब्रिटिश शासको ने कर लगाना आरंभ किया ,जिसका भारतीय उद्योगोंपर गंभीर प्रभाव पडा भारत देश ब्रिटीश सरकार की कूट नीति के कारण एक कृषि -प्रधान देश नहीं रह गया। परिणामस्वरूप निर्धनता बढती गयी और तरह -तरह की जटिल समस्याएँ उभरने लगीं। निर्धनता एवं कई प्रकार की व्याधियों ने देश की स्थिति को अत्यधिक जर्जर कर दिया। ग्रामांचल शोषक वर्ग के अभिशाप से ग्रस्त है। उच्चवर्ग स्वयं सामने न आकर अप्रत्यक्ष रूप से अपने सहाय्यको को शोषण करने के लिए विवश करते हैं और उन्हीं के कारण कृषकों की स्थिति दयनीय होती है। सर्वगामी शोषण मजदूरों व किसानों की अर्थिक स्थिति को शोचनीय बनाता है। कभी -कभी कृषक वर्ग शोषण के विरूध्द आवाज उठातें हैं ,गरीबी के खिलाफ लडते हैं परंतु इसका कोई परिणाम नहीं होता बल्कि शोषण और भी बढता जाता है।

पांडेपुरवा की स्थिति इससे कोई अलग नहीं। नदियों के प्राचीर से घिरा यह भू-भाग वास्तव में बंदी है। गोरखपुर शहर यहाँ से बीस मील की दूरी पर है। किसी प्रकार की कोई सुविधा उपलब्ध नहीं हैं। यहाँ तक कि शिक्षा का भी कोई समुचित प्रबंध नहीं है। यह दीन निर्धन क्षेत्र शहर में लडकों को भेजकर अंग्रेजी शिक्षा दिलाने की सामर्थ्य नहीं रखता। इसलिए थोडीसी शिक्षा प्राप्त कर कोई भाग्यशाली हुआ तो मिल में चार महीने के लिए अधिक से अधिक क्लर्की पा जाता है। अधिक तर ग्रामवासी गाँव की ही धारा में डूबकर अपनी जिंदगी गँवा बैठते हैं।

रामदरश मिश्रजी ने अपने उपन्यास 'पानी के प्राचीर' में उच्च वर्ग के लोगों के अत्याचार केस प्रकार ग्रामीण कृषक वर्ग पर होते हैं इसका सही-सही चित्र खींचा है। आर्थिक विषमता के कारण गाँव के लोगों का जीवन भीतर तक कलूषित और विषाक्त बन गया है। उनमें से अधिकांश लोगों में से प्रेम, करूणा,संवेदनशीलता की वृत्तियाँ लुप्त हो गयी हैं।

पांडेपुरवा ग्राम किसप्रकार अभावग्रस्त है इसका यथार्थ चित्र नीरू के इस कथन से हमें देखने को मिलता है- ''यहाँ न सडकें हैं,न शिक्षा संस्थाएँ हैं,न सुविधापूर्ण डाकखाने हैं,न सुरक्षा के लिए पुलिस चौकियाँ हैं,न चिकित्सालय हैं, न खेतों के सुधार या विकास के लिए कोई सरकारी या गैर सरकारी व्यवस्था है। यहाँ है असूझ गरीबी,व्यापक अशिक्षा,अजगरों की तरह बल खाते दौडते ,उँच्चे -नीचे नाले,बिमारी,बेकारी आपसी फूट और सदियों पुरानी जर्जर नैतिक मान्यताएँ।'' **28**

भौतिक रूप से पांडेपुरवा के लोग बडे ही दरिद्र निर्धन और विवश हैं। निम्नलिखित शब्द इसका सही-सही चित्र आँकते हैं-''इन लोगों की संपत्ति ही क्या है। देह पर कहने सुनने को फटे-फटे गंदे-गंदे अंगोछे लिपटे हुए हैं जिन्हें शायद फटी धोतियों से फाड-फाडकर बनाया गया है। किसी की कमर में भगई लिपटी है जिसका पछोटा बाहर निकलकर लुटुर-लुटुर हिल डुल रहा है।'' **29**

''नीरू देखता है कि, घर सूना था। घर क्या था जर्जर दीवारों से घिरा एक मकान था,जिसके एक ओर की दीवारें आधी गिरी हुई थीं और तीन ओर की दीवारें गिरने के इंतजार में थीं।'' **30**

गाँव की निर्धनता ,आर्थिक समस्या के प्रति संकेत करनेवाले कई उदाहरण उपन्यास में यत्र-तत्र मिलते हैं। बिहार के गाँव में जमींदारों के इस शोषण की समस्या प्राय: ग्रामांचल की साधारण जनता का रोग है। वे जानते हैं कि,लगान न देनेपर उन्हें सुबह से शाम तक बेगार तो भरनी पडेगी, भूखा प्यासा भी रहना होगा। शोषकों के द्वारा शोषित होते चले जाना उनकी नियति बन गयी है। देखिए -''दरबार में बींसों किसान पकडकर लाये गये थे। सबके फटे हाल,नंगे बदन,धूल धूसरित सरवाले। मुंशीजी सबको बारी बारी से मुर्गा बनाकर पीट रहे थे,चिलचिलाती धूप चोट के ऊपर लेपन कर रही थी। मुंशीजी गरजते जा रहे थे- ''मैं सब की नस पहचानता हूँ। तुम सब साले चोर हो। बिना मारे तो सुनते ही नहीं हो। लात के देवता हो , बात से क्यों मानोगे ? दो-दो साल का लगान बाकी है। सिपाहियों के जाने पर घर छोडकर भाग जाते हो।----

मुंशीजी ने एड जमायी,सिपाही ने लाठी के हूरे से ढकेल दिया। किसान मुर्गे की हालत में ही गिर पडा,उसका ललाट ठीकरे से लगकर फूट गया। -------- किसान कसाई के हाथ में पडी गाय की तरह निरीह औंखों से दया की भीख माँग रहे थे।'' **31**

रामदरश मिश्रजी ने अपने उपन्यासों में उच्च वर्ग के लोगों के अत्याचारों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। 'पानी के प्राचीर' में पांडेपुरवा नामक गाँव में होनेंवाले आर्थिक शोषण की समस्या का चित्र खींचा है। मुखिया का जोर जुल्म इतना है कि आये दिन किसी न किसी को अपने कुचक्र में फँसाकर अपना उल्लू सीधा करता है। ऐसी स्थिति में गाँव की उन्नति कैसे संभव है ? इस आर्थिक विषमता के मूल में वर्ग व्यवस्था ही जिम्मेदार है। निम्नवर्ग के लोगों को अपनी स्थिति से उभरने का कोई उपाय नहीं। मुखिया का कथन है ''साले चमार, सियार सभी चले हैं सुराज लेने। नेता बनेंगें सभी लोग, सभी कुत्ते गंगा नहाएँगे तो पता नहीं पत्तल कौन चाटेगा -------।'' **32**

वैसे **''आँचलिक उपन्यासों की समस्या तरह-तरह की है। नाना प्रकार से वर्ग और समाज चित्रित हैं किंतु सबके मूल में मानों आर्थिक समस्या ही, अंत:सलीला की भाँति बहती रहती है।''** **33**

भोजन की समस्या यहाँ की अहम समस्या हैं। 'पानी के प्रार्चीर' का कछार अंचल राप्ती और गौरा नदियों के घेरे में बसा हुआ है। वहाँ की जनता की आर्थिक समस्या का परिचय उनके भोजन की दुरवस्था को देखकर ही मिलता है। इन अंचलवासियों में से कोई शाम को बथुए और सरसों का साग भरपेट खाकर आग तप रहा था। देखिए -

''शाम को बथुए और सरसों का साग -------- शरम नहीं आती तुम लोगों को। सुम्मेसार बनिया के यहाँ अब किस बूते पर जाऊँ जब लोटा थाली, गगरा सब बिक गये हैं।' **34**

**<u>फ) स्थानीय राजनैतिक षडयंत्र की समस्या -</u>**

भारत में जनता की सुरक्षा की जिम्मेदारी पुलिस कर्मचारियों के कंधोंपर है। मिश्रजी के आँचलिक उपन्यासों में चित्रित पुलिस जनता की सुरक्षा के बदले उस पर रोब जमाती हैं। स्थानीय नेताओं का इनके साथ गठबंधन होता है। पुलिस अधिकारी गालियाँ देते हैं और रिश्वत लेकर चले जातें हैं। 'पानी के प्राचीर'

में बैजनाथ द्वारा बिंदिया को रखैल रखी जाने पर बैजनाथ को गिरफ्तार करने आये- दरोगा बैजू की पीठपर लाथ जमाते हुए कहते हैं -'' क्यों साला, बैजूआ, बम्मन होकर चमाइन रखता है।'' **35**

गाँव के मुखिया मध्यस्थता करते हैं और बैजू से रकम ऐंठकर कुछ दरोगा के हाथ में रिश्वत के तौर पर थमा देते हैं और शेष रकम हडप कर देते हैं इसीप्रकार इसी ग्रानांचल की सारी जनता दरोगा साहब को देखकर भय से काँपने लगती है। जब मुखिया द्वारा - दरोगा साहब को चार सौ रूपयों का पाकिट दिया जाता है, तब दरोगा बिना छानबीन किये पांडेपुरवा गाँव से वापस चले जाते हैं। नीरू के संबंध में भी जो झूठी रिपोर्ट तैयार की जाती है, वह भी पुलिसी हथकंडों का ही एक उत्तम उदाहरण है। सरकारी कर्मचारियों की धाँधली का अनुभव ग्रामवासियों को कई बार मिलता है इसलिए इस संबंध में निराशा के कारण अपने भाग्य के संबंध में यह बात घर कर बैठी है कि यही उनके भाग्य में लिखा है। इनसे छुटकारा पाने के कोई आसार नहीं है ---

**'' इस वीरान प्रदेश में नेता है केवल वोट लेने, कर्मचारी आते हैं लोगों को लडाकर अपना उल्लू सीधा करने।'' 36**

**'पानी के प्राचीर' उपन्यास के सशक्त अंश वे हैं जिनमें इस क्षेत्र के समग्र मानव समूह का निरंतर संघर्ष और अभाव चित्रित है। इन्हें निरंतर विवशता की भावना कचोटती रहती है। यांत्रिक उन्नतिं और अंतरिक्ष यात्रा के इस युग में भी देश का यह उपेक्षित भूखंण्ड और इसके निवासी देश की स्वतंत्रता एवं अन्य राष्ट्रीय उपलब्धियों के प्रति आस्थावान बने रहते हैं। 37**

परंतु राजनीतिक चेतना के फलस्वरूप भारतीय ग्रामांचलों में ऊथल-पुथल मच गयी। इसका प्रभाव 'पानी के प्राचीर' में चित्रित पांडेपुरवा गाँव पर भी पडा। ग्राम में आवाज गूंजने लगी 'भारतमाता की जै, गान्ही बाबा की जै, जवाहरलाल नेहरू की जै।' ग्रामांचल में रहनेंवाले अनेकों नेताओं ने गांधीजी के नेतृत्व पर चल्ने का निर्णय लिया। वैसे मुखिया जैसे प्रतिक्रियावादी इस आंदोलन की खिल्ली उडाने का प्रयास करते हैं। परंतु गनपति जैसे नेता इस आंदोलन पर डटे रहते हैं। कछार अँचल की सभी वर्गों की ग्रामीण जनता सन् बयालिस की क्रांति में भाग लेती है। लेखक ने इन आंदोलनों के द्वारा ग्रामों के सुधार के प्रति उनमें संभाव्य परिवर्तनों के प्रति आशावाद व्यक्त किया है। तभी ग्रामीण जनता के नेता निम्नलिखित शब्दों में अपनी आशाएँ व्यक्त करते हैं। 15 अगस्त 1947 को भारत अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त हो गया।

सर्वत्र उल्लास का वातावरण छा गया -सारा गाँव अपने व्यक्तिगत राग-द्वेष को भूलकर उल्लास के साथ राष्ट्रीय पर्व मनाने के लिए एकत्र हुआ। इन ग्रामीणों के सामने नीरू बडे उल्लास के साथ कहता है -

'' आज हमें आजादी मिली है। अब ये पानी की दीवारें टूटेंगी, टूटेंगी ; बाहर से नयी रौशनी आयेगी। खेंतों में नये सपने खिलेंगे। कोई बच्चा पैसे के अभाव में पढाई छोडकर दर-दर नौकरी के लिए नहीं भटकेगा नौकरी की चक्की में पिसकर अपने जीवन के प्यारे अरमानों का गला नहीं घोटेगा। कोई व्यक्ति दवा के अभाव में तडप -तडपकर नहीं मरेगा। ऊबड-खाबड पगडंडियों पर सरक-सरककर बीमार यात्री दम नहीं तोडेगा। सडकों के चौडे पथों से बाहर की सुविधाएँ हमारे गाँवों की ओर दौडेंगी -

''पानी की दीवारें टूटेंगी !

नये सपने खिलेंगे !!

नयी रोशनी लहरायेगी !!! '' **38**

परंतु प्रश्न यह उठता है कि क्या वास्तव में इन आशाओं की पूर्ति हुई ? स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व स्वतंत्रता के परवर्ती भारतीय ग्रामों के जो स्वप्न देखे थे, वे प्रत्यक्ष में उतर गये ? स्वयं मिश्रजी ने भी यही प्रश्न उठाया। उत्तर कुछ हदतक निराशाजनक ही रहा। 'पानी के प्राचीर' जो 1959 में पूरा हो गया था, किन्तु प्रकाशित हुआ 1961में -की भूमिका में मिश्रजी ने स्वयं लिखा है, '' यह कहानी स्वाधीनता प्राप्ति के पहले की है। स्वाधीनता प्राप्ति के अवसरपर हमने पूरे उल्लास के साथ अनुभव किया था कि पानी के प्राचीर अब टूटेंगे ही। ये प्राचीर टूटे कि हमारी सारी उम्मीदे टूटीं इसका परिचय इस उपन्यास के दूसरे भाग में देने का प्रयास किया जाएगा।''

मिश्रजी ने अपने दूसरे उपन्यास 'जल टूटता हुआ 'की भूमिका में इसी क्रम से लिखा -'' इसका भूभाग वही कछार अँचल है जो 'पानी के प्राचीर' का है, किन्तु समय की चेतना दोनों को अलगाती है। समय के फलक पर इन्हें एक भूभाग का पूर्वार्ध्द और उत्तरार्ध्द कहा जा सकता है किन्तु अपनी अपनी सत्ता में पूर्ण स्वतंत्र।'' यह भूभाग चारों ओर से नदियों से घिरा हुआ है - यह बीहड कछार है और आज भी आधुनिक सुविधाओं से काफी हदतक वंचित।

आगे मिश्रजी लिखते हैं - 'पानी के प्राचीर' स्वातंत्र्यपूर्व का गाँव है और 'जल टूटता हुआ ' स्वातंत्र्य पश्चात का। जिस गाँव को मैंने इन दोनों उपन्यासों में चित्रित किया है वह भौगोलिक रूप से एक होकर भी चरित्र में दो गाँव है, यानी स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात वही गाँव अपने पूरे चरित्र में बदला है। यह परिवर्तनशील गाँव स्वाधीनता परवर्ती समय के दबाव से उसी प्रकार बन बिगड रहा जैसे अनेक गाँव।

डॉ. विनय के शब्दों में - ' गरीब भारतीय जनता ने स्वतंत्रता के बाद जो आशाएँ संजोये थीं वे कुछ समय बाद बिखरती टूटती नजर आयी और मनुष्य भयाक्रांत स्थितियों के बीच घिसटने की प्रक्रिया को अपनाए रहा। इसका अर्थ यह नहीं कि इस देश के सामाजिक संवेदन में कोई परिवर्तन स्वतंत्रता के बाद नहीं आया। उस परिवर्तन का उज्ज्वल पक्ष भौतिक उन्नति के रूप में देखा जा सकता है। पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत ऐसे अनेक कार्य हुए जिनसे देश समृध्दि की ओर अग्रेसर दिखाई दिया। नए वैज्ञानिक और प्राविधिक आयामों की भी खोज हुई लेकिन मानसिकता के स्तर पर आंतरिक विघटन का इतना व्यापक विष फैला कि उपलब्धियों के प्रति भी प्रश्नचिन्ह लगता चला गया। दूसरे पक्ष में देश भ्रष्टाचार, अनाचार, बेईमानी, घुसखोरी और मानवीय संबंधों में विघटन तथा आत्म अस्तित्व के प्रति कर्तव्यहीनता का शिकार बन गया।

**''पर आँचलिक कथाकार ग्राम यथार्थ की इस विभीषिका में भी निराश नहीं होता है। इन तमाम विपरीतताओं में भी वह आशा की डोर से बंधा होता है, जिसके सहारे वह समूची मानवता को प्रकाश की ओर बढने की प्रेरणा देता है उसमें साहस और शक्ति का संचारण करता है। 'जल टूटता हुआ ' का कथाकार भी उपन्यास के अंत में इसी आशा का संदेश देता हैं। 39**

**उसके एक महत्वपूर्ण पात्र सतीश के इस कथन में कि ''वहाँ सब कुछ टूट रहा है, मूल्य टूट रहे हैं, सत्य टूट रहा है। कोई किसी का नहीं, सभी अकेले हैं, एक दूसरे के तमाशाई - मगर नहीं एक नया गाँव भी बन रहा हैं, वह है किसानों का मजदूरोंका।'' यही आशा की डोर प्रतिबिंबित हो रही है। 40 सतीश के पास ऐसी संकल्प समन्वित शक्ति है जो उसे हर समय प्रकाश की ओर बढने की प्रेरणा देती है। उसका कथन है,** '' अंधकार में प्रकाश की खोज मेरा उद्देश रहा है, कई बार गिरा हूँ, अंधकार में सना हूँ लेकिन उसमें से निकला हूँ प्रकाश पाने की तडप लेकर।''

यही वह वास्तविक तत्व है, सत्य है, जो टूटते हुए मनुष्य समाज और मूल्यों को बचा सकता है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि लेखक को ग्राम यथार्थ को उसके वास्तविक रूप में प्रतिबिंबित करने में और मानव मूल्यों के प्रति अटूट श्रध्दा व्यक्त करनें में बहुत हदतक सफलता मिली है। 'पानी के प्राचीर' एक श्रेष्ठ, सशक्त, आँचलिक उपन्यास है। उसने आँचलिकता की प्रवृत्ति को बढाया है, विकसित किया है।

**निष्कर्ष :**

'पानी के प्राचीर' में गोरखपुर जिले में कछार अंचल के रूप में एक विशाल भू-भाग की विभिन्न समस्याएँ चित्रित हैं। युगों से यह प्रदेश केवल विवशता, अभाव और संघर्ष के रूप में शेष रह गया है। संसार के सारे सूत्रों से यह प्रदेश कटा हुआ है। बाहर के नागरी जीवन की भौतिक सुविधाओं से यह पूर्णत: वंचित है। भौतिक असुविधाओं से व्याप्त इस प्रदेश को गुलामी ने और जकड लिया है। भौगोलिक समस्या के फल स्वरूप बाढ के भयानक दुष्परिणामों से जूझना पडता है। ऐसे अंचल पिछडेपन के प्रतीक हैं और इनमें सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याएँ सदैव मुँह बाएँ खडी रहती हैं।

सामाजिक समस्या के अंतर्गत अंधश्रध्दा, भूत-प्रेत आदि में विश्वास ,वर्गगत विद्वेष, जातिभेद आदि का सम्यक् चित्र लेखकने खींचा है। नारी की समस्या तो ग्रामों में नारियों के लिए अभिशाप है। नारी अत्यंत प्रताडित है। उसकी शिक्षा का तो कोई प्रबंध है ही नहीं, विवाह की समस्या तो और भी जटिल है। दहेज प्रथा आर्थिक लाभ की अपेक्षा प्रतिष्ठा की वस्तु है। उसके परिणामस्वरूप अनमेल विवाह, बाल विवाह जैसी अनेक कुप्रथाएँ जन्म लेती हैं। विधवा की समस्या तो अनिवार्य रूप से विकराल रूप में है। तात्पर्य ग्रामों में नारी की स्थिति बडी शोचनीय है। 'पानी के प्राचीर' की तरह अनेक आँचलिक उपन्यासों में नारी की इस दुरवस्था का चित्रण मिलता है। गेंदा ,गुलाबी की तरह बदमी, रतिनाथ की चाची, चमेली, परमेस्सर की पत्नी उगनी, गोपी की भाभी, माया आदि अनेकों विधवा महिलाओं के जीवन की पीडादायक व्यथा-कथा का चित्रण इसका ज्वलंत उदाहरण हैं। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था एक अभिशाप बनकर रह गई है और दलित पिछडी जातियाँ सदैव अमानवीय कृत्यों का शिकार बन गई हैं। ग्रामांचलों में छुआ-छूत , ऊँच-नीच की भावना आदि की कुप्रथाएँ सदैव विद्यमान हैं। जाति व्यवस्था के यौन संबंधों की स्थापना संबंधी प्रतिबंध

एवं उसके खंडन के अनेकों स्थल आँचलिक उपन्यास साहित्य में मिलते हैं। ग्रामीण अंचल आर्थिक रूप से सबसे अधिक पिछडा व साधनहीन माना जाता है। ब्रिटिश सरकार की कूट नीति के परिणामस्वरूप इस कृषिप्रधान देश में कृषकों की स्थिति ही अत्यंत शोचनीय बन गई है। किसानों का सर्वगामी शोषण किसानों की स्थिति को बद से बदतर बनाता है। पांडेपुरवा की भी यही स्थिति है।इसके अभाव का सही सही और मार्मिक चित्र मिश्रजी ने उपन्यास में खींचा है। शोषण की समस्या ग्रामांचल की जनता का रोग है। न सडकों का प्रबंध है, न शिक्षा की कोई व्यवस्था है, न भोजन का पर्याप्त प्रबंध है। राजनैतिक तथा शासन संबंधी षडयंत्र भी ग्रामांचलों के लिए बडा अभिशाप है। पुलिसों के हथकंडे रिश्वतखोरी ये आये दिन की बातें हैं। तभी यह धारणा यहाँ घर कर बैठी है कि उस वीरान प्रदेश में नेता आते हैं केवल वोट माँगने सरकारी कर्मचारी आतें हैं लोगों को लडाकर अपना उल्लू सीधा करने। रक्षक ही भक्षक बन जाते हैं। अंत: सर्वत्र निराशा का ही घना कुहरा है।

फिर भी राजनैतिक चेतना के फलस्वरूप उन ग्रामों में कुछ उथल पुथल मचने लगी है। स्वतंत्रता संग्राम जोर पकड रहा है। और लोगों को आशा बँधती है कि पानी की ये दीवारें टूटेंगी! नये सपने खिलेंगें !! नई रोशनी लहराएगी !!!

अन्य आँचलिक उपन्यासकारों के अनुसार 'पानी के प्राचीर' में भी मिश्रजी का स्वर आशावादी और गाँवों के पुनर्निर्माण की भावना से युक्त है। 'पानी के प्राचीर' में लेखक को प्राचीरों के टूटने की आशा है । फिर भी लेखक ने ही यह प्रश्न उठाया है कि वास्तव में इन आशाओं की पूर्ति हुई ? ये प्राचीर टूटे कि हमारी उम्मींदे टूटीं इसका परिचय इस उपन्यास के दूसरे भाग में देने का प्रयास किया जाएगा। मिश्रजी ने अपने दूसरे उपन्यास 'जल टूटता हुआ ' की भूमिका में इसी क्रम से लिखा-इसका भूभाग वही कछार अंचल है जो 'पानी के प्राचीर' का किन्तु समय की चेतना दोनों को अलगाती है।'पानी के प्राचीर' इस भूभाग का पूर्वार्ध्द है तो 'जल टूटता हुआ ' इसका उत्तरार्ध्द है। फिर भी अपनी अपनी सत्ता में पूर्ण स्वतंत्र। यह बिहड कछार आज भी आधुनिक सुविधाओंसे काफी हदतक वंचित है।

'पानी के प्राचीर' स्वतंत्रता पूर्व का उपन्यास है तो 'जल टूटता हुआ ' स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात का। वैसे भौतिक उन्नति के रूप में परिवर्तन का उज्ज्वल पक्ष दिखाई देता है, परंतु मानसिकता के स्तर पर

आंतरिक विघटन का व्यापक विष भ्रष्टाचार, अनाचार, बेईमानी, घुसखोरी और मानवीय संबंधों में विघटन आदि के रूप में फैल गया है।

फिर भी आँचलिक कथाकार इस विभीषिका में भी आशा की डोर से बँधा होता है। 'जल टूटता हुआ ' के सतीश के शब्दों में 'वहाँ सब कुछ टूट रहा है, मूल्य टूट रहे हैं, सत्य टूट रहा है .....मगर नहीं एक नया गाँव भी बन रहा है - किसानों का ,मजदूरोंका। तात्पर्य लेखक को ग्राम यथार्थ को उसके वास्तविक रूप में प्रतिबिंबित करने में और मानव मूल्यों के प्रति अटूट श्रध्दा कायम करनें में बहुत हदतक सफलता मिली है।

वास्तव में साहित्य का चरम लक्ष्य भी यही प्रेरणा है।

**संदर्भ संकेत :**


1. डॉ. बन्सीधर : हिंदी के आँचलिक उपन्यास -सिध्दांत और समीक्षा - पृ. 79.
2. डॉ. जवाहर सिंह : हिंदी के आँचलिक उपन्यासों की शिल्प विधि -प्रस्तावना से उद्धृत.
3. महावीर सिंह चौहान : रामदरश मिश्र की सृजनयात्रा - पृ, 76 .
4. 'पानी के प्राचीर ' पूर्वाभास से
5. डॉ.आदर्श सक्सेना : हिंदी के आँचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि से उध्दृत 'पानी के प्राचीर' के पूर्वाभास से - पृ. 161
6. डॉ, रामदरश मिश्र : पानी के प्राचीर - पृ. 144.
7. डॉ. राजकुमारी सिंह : हिंदी तथा अंग्रेजी के आँचलिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन - पृ, 74
8. डॉ. रामदरश मिश्र : पानी के प्राचीर ' पृ. 233
9. वही पृ. 170
10. वही पृ. 10
11. वही पृ. 156
12. वही पृ. 38
13. वही पृ. 126
14. वही पृ. 156 -157
15. वही पृ. 157
16. वही पृ. 157
17. वही पृ. 170
18. वही पृ. 188
19. वही पृ. 123
20. वही पृ, 127
21. वही पृ. 157
22. वही पृ. 157
23. वही पृ. 157

24. वही पृ, 227-228

25. वही पृ. 52

26. वही पृ. 44

27. वही पृ. 313

28. वही पृ. भूमिका-पूर्वाभास से

29. वह पृ. 16-17

30. वही पृ. 58

31. वही पृ. 160-161

32. वही पृ. 229

33. डॉ. भीष्म सहानी आदि : आधुनिक हिंदी उपन्यास - पृ. 2

34. डॉ. रामदरश मिश्र : पानी के प्राचीर - पृ. 117

35. वही पृ. 42

36. डॉ. आदर्श सक्सेना : हिंदी के आँचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि से उध्दृत - पृ. 161

37. डॉ. प्रतापनारायण टंडन : हिंदी उपन्यास उद्‌भव और विकास - पृ, 204

38. डॉ, रामदरश मिश्र : पानी के प्राचीर पृ.- 233

39. डॉ. बन्सीधर : हिंदी के आँचलिक उपन्यास ' -- पृ. 197-198

40. डॉ. मिश्र रामदरश : 'जल टूटता हुआ ' पृ. 258